सम्पादकीय

शक्ति-पूजन की परम्परा में श्रीदुर्गासप्तशती का अनन्य स्थान है। वासन्त नवरात्र हो या शारदीय, माँ दुर्गा की पूजा के साथ दुर्गासप्तशती में निहित उनकी महिमा का पाठ घर घर में श्रद्धापूर्वक होता है। यद्यपि यह दुर्गासप्तशती मार्कण्डेय-पुराण का अंश है; किन्तु यह सदियों से अपने आकर-ग्रन्थ से पृथक् अस्तित्व बना चुका है। कात्यायनी तन्त्र में इसके मन्त्र-विभाग का उल्लेख मिलता है। इसके सात सौ मन्त्रों का पारायण, वाचन और जप सदियों से कार्यसिद्धि एवं साधना के लिए होता आया है। इतना ही नहीं, इस ग्रन्थ का लेखन भी देवी दुर्गा की उपासना के रूप में सदियों से प्रतिष्ठित रहा है।

दुर्गासप्तशती की परम्परा सम्पूर्ण भारत में व्याप्त है। दक्षिण भारत में भी इसकी कई टीकाओं का निर्माण हुआ है। भारत-विश्रुत वैयाकरण नागेश भट्ट ने भी इस पवित्र-ग्रन्थ पर अपनी टीका लिखी है; विभिन्न भाषाओं में इसके गद्यानुवाद एवं पद्यानुवाद हुए हैं। इसकी प्रमुख छह संस्कृत टीकाओं का संकलन भी बीसवीं शती के प्रारम्भ में ही औदीच्य सहस्रज्ञातीय व्यङ्कटरामात्मज हरिकृष्णशर्मा के सम्पादन में खेमराज वेंकटेश्वर प्रेस, मुम्बई से प्रकाशित हो चुका है। इन संस्कृत टीकाओं के अवलोकन से इसके विभिन्न पाठ उपलब्ध होते हैं। ये पाठ वस्तुतः क्षेत्र-विशेष की परम्परा का प्रतिनिधित्व करते हैं। इनमें कहीं कहीं शब्दों का अन्तर है तो कहीं श्लोकार्द्ध या एक श्लोक का अन्तर है।

महावीर मन्दिर से प्रकाशित इस संस्करण में इन पाठान्तरों को भी संकलित कर इसे सार्वजनीन बनाने का प्रयास किया गया है। इसके व्याख्याकार स्व० कृष्णचन्द्र मिश्र ने अथक परिश्रम कर इसके मूल श्लोकों का पदच्छेद कर जहाँ एक ओर असंस्कृतज्ञ के द्वारा भी इस के पाठ को अत्यन्त सुगम बना दिया है, वहीं संस्कृतज्ञों के लिए भी पाठ के समय ही अर्थानुसन्धान की गति बढ़ाने में सुविधा प्रदान की है। इसके लिए हम उनके प्रति श्रद्धावनत हैं। स्व० मिश्रजी ने इसके साथ अन्वय भी अलग से लिखा था; किन्तु अन्वय के क्रम में ही हिन्दी शब्दार्थ रहने के कारण उसे अनिवार्य नहीं समझकर विस्तार के भय से छोड़ दिया गया है। प्रत्येक श्लोक का अनुवाद भी पृथक् से दिया गया है तथा श्लोकों में निहित गूढार्थ स्पष्ट किये गये हैं। प्रस्तुत द्वितीय संस्करण में भी कई नवीन स्थल सम्पादक द्वारा लिखे गये हैं।

दुर्गासप्तशती में मन्त्र-संख्या एक महत्त्वपूर्ण वस्तु है। इसके प्रत्येक मन्त्र के आगे पीछे अभीष्ट मन्त्र का जप कर इसका सम्पुट पाठ भी विशेष साधना के लिए किया जाता है तथा इसके प्रत्येक मन्त्र से हवन भी किये जाते हैं। इसके लिए प्रत्येक मन्त्र के अन्त विराम होना आवश्यक है, किन्तु व्याख्या की दृष्टि से एक मन्त्र एक दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं कि उन्हें अलग नही किया जा सकता। प्रस्तुत संस्करण के सम्पादन में यह एक समस्या थी कि श्लोकों का समायोजन मन्त्र संख्या की दृष्टि से किया जाय या व्याख्या की दृष्टि से अन्वय को देखते हुए किया जाये। इस विषय में हमने भक्तों की सुविधा का ध्यान रखते हुए मन्त्रों का समायोजन तो मन्त्रसंख्या की दृष्टि से किया है; किन्तु व्याख्या पूर्ववत् अन्वय की दृष्टि से रखी गयी है, जिससे हवन या अन्य पुरश्चरण करते समय मन्त्रांक में असुविधा न हो। इस कारण कई स्थल पर मूल के पहले ही व्याख्या आ जाने की स्थिति हो गयी है। इस संस्करण में भगवती दुर्गा की सबसे प्राचीन उपलब्ध पूजा-पद्धति का भी संकलन किया गया है, जिसे हमने बौधायन गृह्यसूत्र से लिया है। इसके तृतीय खण्ड (प्रश्न) के तीसरे अध्याय में दुर्गापूजा की विशुद्ध वैदिक पद्धति उपलब्ध है, जो एक ओर दुर्गापूजा की प्राचीनता सिद्ध करती है, तो दूसरी ओर इस पूजा की सात्त्विक विधि का प्रतिपादन करती है। यह विधि प्रामाणिक होने के साथ-साथ कर्मकाण्ड की जटिलता से दूर होने के कारण श्रद्धालुओं द्वारा प्रतिदिन घर में भी करने योग्य है। श्रद्धालुओं के लिए यह उपहार यहाँ प्रस्तुत किया गया है। सम्पादन के क्रम में इसमें कलशस्थापन-विधि तथा अग्निस्थापन विधि जोड़कर इसे उपयोगी बनाया गया है। अग्निस्थापन की विधि प० श्री जटेश झा के सौजन्य से प्राप्त है।

दुर्गासप्तशती के अंग-स्तोत्र

दुर्गासप्तशती के अन्तर्गत कवच, अर्गला एवं कीलक के प्रदीप टीकाकार ने देवीकवच के प्रथम मन्त्र की टीका में सप्तशती के अंगों की विवेचना की है और इन अंगों का पाठ आवश्यक मानते हुए कात्यायनी तन्त्र के वचन को उद्धृत किया है कि जैसे आत्मा अंगहीन होकर किसी भी कार्य में सक्षम नहीं होता है, उसी प्रकार छह अंगों से विहीन दुर्गासप्तशती पाठ की स्थिति होती है–

अङ्गहीनो यथा देही सर्वकर्मसु न क्षमः।
अङ्गषट्कविहीना तु तथा सप्तशतीस्तुतिः।।

इसी क्रम में कात्यायनी तन्त्र में उक्त रावण आदि की कथा का उल्लेख किया गया है कि इन्होंने अङ्गहीन सप्तशती का पाठ किया था अतः वे पराभूत हुए। कात्यायनी तन्त्र में अर्गला, कीलक, कवच, प्राधानिक रहस्य, मूर्ति रहस्य एवं वैकृतिक रहस्य इन छह स्तुतियों को सप्तशती का अंग माना गया है। (कवच के प्रथम मन्त्र की प्रदीप व्याख्या में उद्धृत)

मार्कण्डेय पुराण के अन्तर्गत तेरह अध्याय के श्लोकों का सात सौ मन्त्रों के रूप में विभाग सप्तशती का मुख्य अंग है, किन्तु इसके कम से कम तीन अन्य अंग प्रमुख हैं। इन तीनों के पाठ के दो क्रम हैं। एक क्रम में कवच, अर्गला एवं कीलक का क्रमिक पाठ होता है। दूसरे क्रम में अर्गला, कीलक एवं कवच का पाठ होता है। इन तीनों अंगों के सम्बन्ध में दुर्गापटल में एक कथा का उल्लेख किया गया है। बृहज्ज्योतिषार्णव के अष्टम स्कन्ध में उपासनास्तबक के दुर्गोपासनाकल्पद्रुमाध्याय में इस कथा का उल्लेख इस प्रकार है कि एक बार रावण आकाशमार्ग से कहीं जा रहा था। उसने पृथ्वी पर किसी पण्डित को दुर्गा देवी की आराधना करते हुए सुना। रावण ने उस पण्डित से पूछा कि आप क्या कर रहें हैं। पण्डित ने कहा कि मैं भगवती दुर्गा की उपासना कर रहा हूँ, इससे मुझे राज्य की प्राप्ति होगी। रावण ने गर्व से कहा कि इस समय मैं तीनों लोकों का राजा हूँ। मैं आपको राज्य देता हूँ आप मुझे यह पुस्तक दें। रावण से राज्य प्राप्त कर उस पण्डित ने रावण को वह पुस्तक सौंप दी। रावण अर्गला, कीलक आदि स्तोत्रों को सामान्य स्तोत्र समझ कर उन्हें छोड़कर सप्तशती का पाठ करने लगा। इस प्रकार के पाठ से अभिचार कर्म होने के कारण देवताओं का नाश हुआ।

बाद में जब अरुण नामक राक्षस तीनों लोकों को पीड़ा देने लगा तब देवताओं ने भी अरुण के नाश के लिए इसी प्रकार अभिचार करने लगे, जिससे भगवती अप्रसन्न हो गयी। इस प्रकार अभिचार अर्थात् दूसरे की हानि के लिए साधना करने से देवी अप्रसन्न हो जाती हैं, यह भी यहाँ अभिप्रेत है। तब देवता लोग ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश के पास गये। भगवान् शंकर ने उन्हें कवच, अर्गला एवं कीलक के साथ सप्तशती का उपदेश किया। इससे देवी प्रसन्न हुई और उन्होंने भ्रामरी का रूप धारण कर अरुण का संहार किया। इस प्रकार सप्तशती के अंग के रूप में इस स्तुतियों का समावेश हुआ।

इसी स्थल पर आगे कहा गया है–

जय त्वं च जयन्ती च श्लोकद्वितयमर्गलम्।
मधुकैटभविद्रावि विधात्रीति नवार्णकम्।।८१।।

अर्थात् **जय त्वं देवि चामुण्डे** इत्यादि एवं **जयन्ती मङ्गला काली** इत्यादि दो मन्त्र अर्गला हैं तथा **मधुकैटभविद्रावि** इत्यादि नवार्ण मन्त्र हैं। यहाँ नागेश भट्ट ने **धूम्राक्षस्य च मर्दिनी०** पर्यन्त नवार्ण मन्त्र माना है। ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश क्रमशः कवच, अर्गला एवं कीलक मन्त्रों के प्रवक्ता है। इस स्थल से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि अर्गला का प्रथम मन्त्र **जय त्वं देवि चामुण्डे** इत्यादि है।

कीलकं शंकरप्रोक्तं कवचं ब्रह्मणा कृतम्।
अर्गलं विष्णुना प्रोक्तमेतत्त्रितयमुत्तमम्।।८२।।

इसी स्थल पर अर्गला, कील एवं कवच के क्रमशः पाठ का विधान किया गया है—

अर्गलाकीलकं चादौ पठित्वा कवचं पठेत्।
जपेत्सप्तशतीं चण्डीं क्रम एष शिवोदितः।।

मिथिला एवं बंगाल में यहीं क्रम परम्परा से प्राप्त है। अतः इस संस्करण में इसी क्रम का समावेश किया गया है। इसका विस्तृत विवेचन आगे किया गया है।

दुर्गासप्तशती में देवी का माहात्म्य तीन चरितों में निबद्ध है। प्रथम चरित की कथा की पृष्ठभूमि सृष्टि से पूर्व की है। भगवान् विष्णु एकार्णव में शयन कर रहे हैं- **एकार्णवे हि शयनात्ततः स ददृशे च तौ॥** चारों ओर जल ही जल है। वह कल्पान्त की स्थिति है। उसी सृष्टि-पूर्व पृष्ठभूमि का वर्णन ऋग्वेद के नासदीय सूक्त में आया है कि उस समय न सत् था न असत्, न तो कोई लोक था न आकाश। किसने किसकी रक्षा के लिए किसे ढँका था? चारों ओर अगम अथाह जल ही जल था । इसी पृष्ठभूमि में मधु और कैटभ का जन्म हुआ। उसके संहार के लिए ब्रह्मा ने विष्णु को जगाने की चेष्टा की; जिसके लिए उन्हें योगनिद्रा देवी की स्तुति करनी पड़ी। इस प्रकार प्रथम चरित सृष्टि के उद्रेक में देवी की भूमिका का बखान करता हुआ उन्हें सृष्टिकर्त्री के रूप में स्थापित करता है। प्रथम चरित में ब्रह्मा एवं विष्णु इन्हीं दो देवों की चर्चा है।

मध्यम चरित की पृष्ठभूमि में देवी का विकसित स्वरूप है। सृष्टि का विकास हो चुका है। सूर्य, इन्द्र, अनिल, अग्नि, वरुण आदि देव अपने-अपने कार्यों में संलग्न हो चुके हैं। स्वर्ग, मर्त्य, पाताल आदि लोकों की भी स्थापना हो चुकी है। इस समय महिषासुर सब देवों का अधिकार छीन लेता है- **सूर्येन्द्राग्न्यानिलेन्दूनां यमस्य वरुणस्य च। अन्येषां**

चाधिकारान् स स्वयमेवाधितिष्ठति। देवों का स्वर्ग भी छिन जाता है। इस स्थिति में सभी देव अपनी-अपनी शक्ति को एकत्रित कर अपने-अपने अस्त्र-शस्त्र देकर एक नारी शरीर की सृष्टि करते हैं। यहाँ देवी एकशरीरा है। यह देवी महिषासुर का विनाश कर देवताओं को अपने-अपने स्थान पर स्थापित होकर कार्य करने का अवसर देती हैं। प्रथम चरित से उत्तरोत्तर विकसित अवस्था की कथा मध्यम चरित में है।

उत्तर चरित की पृष्ठभूमि पूर्ण विकसित है। यहाँ अवतारवाद का स्पष्ट उल्लेख है। एक देवी से अनेक देवियों की उत्पत्ति का वर्णन है। देवी वचन देती हैं कि जब-जब पृथ्वी पर कोई विपत्ति आयेगी मैं अवतार लेकर रक्षा करूँगी। सप्तशती के एकादश अध्याय में जन्म जन्मान्तर की कथा है; अवतार ग्रहण का उल्लेख है।

इस प्रकार दुर्गासप्तशती का यह क्रम सूक्ष्म से स्थूल जगत् की ओर अग्रसर है। फलतः अंग के रूप में अर्गला, कीलक एवं कवच मन्त्रों का क्रम भी सूक्ष्म से स्थूल की ओर होना उचित है। कवच मन्त्र में स्थूल शरीर की रक्षा के लिए प्रार्थना की गयी है। अतः उसका पाठ कीलक के बाद होना चाहिए। कीलक मन्त्र ध्यान को केन्द्रित करने के लिए है। कीलक मन्त्र के केवल प्रथम श्लोक में भगवान् शंकर की स्तुति की गयी है शेष फलश्रुति है। ऐसा इसलिए कि ध्यान केन्द्रित हो। अर्गला पापनाशन मन्त्र है 'चामुण्डा-तन्त्र एवं चिदंबर-संहिता में कहा गया है- **'अर्गलं दुरितं हन्ति।'**

अतः साधक पहले किए गये पाप के नाश के लिए अर्गला का पाठ करें, तब ध्यान केन्द्रित करने के लिए कीलक का पाठ करें और अन्त में कवच का पाठ करें। यह इस क्रम का रहस्य है।

अर्गला-स्तोत्र का स्वरूप

सप्तशती के अंग के रूप में पठित अर्गला का आरम्भ भी कई दृष्टि से विचारणीय है। १८६० ई० में आगरा से प्रकाशित ब्राह्मावधूत श्री सुखानन्दनाथ कृत शब्दार्थ-चिन्तामणि शब्दकोष में 'अर्गला' शब्द की व्याख्या में उल्लिखित है:- **दुर्गापाठादौ पाठ्ये देवीस्तोत्रविशेषे । यथा । मार्कण्डेय उवाच। ब्रह्मन् केन प्रकारेण दुर्गामाहात्म्यमुत्तमम्। शीघ्रं सिद्ध्यति तत्सर्वं कथयस्व महाप्रभो। ब्रह्मोवाच। अर्गलं कीलकं चादौ पठित्वा कवचं पठेत्। जपेत् सप्तशतीं पश्चात् क्रम एष शिवोदित इति।**

राजा राधाकान्त देव ने भी 'शब्दकल्पद्रुम' में 'अर्गला' शब्द की व्याख्या में इसे समग्र रूप से उद्धृत किया है:- **मार्कण्डेय उवाच। ब्रह्मन् केन प्रकारेण दुर्गा माहात्म्यमुत्तमम्।शीघ्रं सिद्ध्यति तत्सर्वं कथयस्व महाप्रभो।। ब्रह्मोवाच।अर्गलं कीलकं चादौ जपित्वा कवचं पठेत्। जपेत् सप्तशतीं पश्चात् क्रम एष शिवोदितः।।अर्गलं दुरितं हन्ति कीलकं फलदं तथा। कवचं रक्षते नित्यं चण्डिका त्रितयं दिशेत्।। अर्गलं हृदये यस्य स चानर्गलवाक् सदा। कीलकं हृदये यस्य वशकीलितमानसः।। कवचं हृदये यस्य स वज्रहृदयः खलु।ब्रह्मणा निर्मितं पूर्वं विनिश्चित्यापि चेतसा।। इत्यादि। तदाद्यश्लोको यथा,- "जय त्वं देवि चामुण्डे जय भूतापहारिणि! जय सर्वगते देवि कालरात्रि नमोऽस्तु ते।।" तस्य शेषश्लोको यथा,- "इदं स्तोत्रं पठित्वा तु महास्तोत्रं पठेन्नरः। सप्तशतीं समारभ्य वरमाप्नोति सम्पदः।**

तारानाथ तर्कवाचस्पति ने भी 'वाचस्पत्यम्' में अर्गला की व्याख्या उपरिवत् की है। ये उद्धरण इन प्रारम्भिक श्लोकों की प्रामाणिकता पुष्ट करते हैं। मिथिला में म० म० परमेश्वर झा ने दुर्गासप्तशती में इस स्थल को निम्न प्रकार से उद्धृत किया है:-

मार्कण्डेय उवाच

ब्रह्मन् केन प्रकारेण दुर्गा माहात्म्यमुत्तमम्।
शीघ्रं सिद्ध्यति तत्सर्वं कथयस्व महामते।।

ब्रह्मोवाच

अर्गलं कीलकं चादौ जपित्वा कवचं पठेत्।
जपेत् सप्तशतीं पश्चात् क्रम एष शिवोदितः।।
अर्गलं दुरितं हन्ति कीलकं फलदं भवेत्।
कवचं रक्षते नित्यं चण्डिका त्रितयं तथा।।
अर्गलं हृदये यस्य तथानर्गलवागसौ।
भविष्यतीति निश्चित्य शिवेन कथितं पुरा।।
कीलकं हृदये यस्य स कीलितमनोरथः।
भविष्यति न सन्देहो नान्यथा शिवभाषितम्।।
कवचं हृदये यस्य स वज्रकवचः खलु।
भविष्यतीति निश्चित्य ब्रह्मणा निर्मितं पुरा।।

यद्यपि मिथिला में यह अंश अर्गला के साथ ही पठित है किन्तु यह सप्तशती की पाठ-विधि है; अर्गला का अंश नहीं। इसलिए प्रस्तुत संस्करण में इसे पृथक् कर दिया गया है। अर्गला मन्त्र में अनेक ऐसे श्लोक हैं, जो गीता प्रेस के पाठ में नहीं हैं। उन्हें प्रस्तुत संस्करण में पाद टिप्पणी में रखा गया है।

पाठविधि

कलियुग में श्रीमद्भगवद्गीता, महाभारतान्तर्गत विष्णुसहस्रनाम, दुर्गासहस्रनाम एवं सप्तशती स्तोत्र इन चारों का विशेष माहात्म्य कहा गया है—

भीष्मपर्वणि या गीता सा प्रशस्ता कलौ युगे।
विष्णोर्नामसहस्राख्यं महाभारतमध्यमम्।।
चण्ड्याः सप्तशतीस्तोत्रं तथा नामसहस्रकम्।

शारदीय एवं वासन्त नवरात्र में इस दुर्गासप्तशती का पाठ विशेष श्रद्धा के साथ किया जाता है। अन्य दिनों में भी शुभ अवसरों पर तथा संकट की घड़ी में भी समान रूप से इसका अनुष्ठान किया जाता है।

सप्तशती में कुल ७०० मन्त्र हैं, किन्तु यदि श्लोकों की संख्या देखी जाय तो ५६८ के लगभग होते हैं।

इस सप्तशती के पाठ का उत्तम कल्प यह है कि सम्पूर्ण पाठ कण्ठस्थ हो, पाठ के साथ ही अर्थ भी समझते रहें तथा अञ्जलि-मुद्रा में इसका पाठ करें। वैकृतिक रहस्य में कहा गया है कि **ततः कृताञ्जलिपुटः स्तुवीत चरितैरिमैः**। इस पाठ में अध्याय के अन्त में भी विराम नहीं करना उत्तम पक्ष है।

दूसरे कल्प में पुस्तक देखकर श्रद्धापूर्वक अंगों के साथ सम्पूर्ण सप्तशती का पाठ करें। अध्याय के अन्त में विराम दिया जा सकता है, किन्तु वहाँ भी **इति**, **वध**, एवं **अध्याय** इन तीन शब्दों के उच्चारण का निषेध किया गया है। इनके उच्चारण से क्रमशः लक्ष्मीनाश, कुलनाश और प्राणनाश की बात कही गयी है। अतः **महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीदेवताभ्यो नमः** इस मन्त्र से प्रत्येक अध्याय के अन्त में जल समर्पित करने की परम्परा देखी जाती है।

सप्तशती के तीनों चरितों के आरम्भ में ध्यान एवं विनियोग का उल्लेख गीताप्रेस के संस्करणों में आया है। किन्तु जो साधक सम्पूर्ण दुर्गासप्तशती का पाठ करते हैं अथवा सम्पुट पाठादि विशेष साधना करते हैं उन्हें सप्तशती के बीच में कहीं भी ध्यान एवं विनियोग का पाठ कर व्यवधान करना उचित नहीं है। इस संस्करण में ध्यान एवं विनियोग ऐसे भक्तों के लिए दिए गये है, जो आगे कही गयी पद्धति को अपना कर खण्डशः पाठ करते हैं।

पुस्तक देखकर विशेष रूप से संस्कृत नहीं जाननेवालों के लिए सभी अंगों के साथ इसका पाठ समय-सापेक्ष हो जाता है। अतः इसके विभिन्न प्रकार के पाठ की रूपरेखा उपलब्ध होती है। दुर्गासप्तशती के गुप्तवती टीकाकार ने एक पक्ष का उल्लेख किया है कि एक दिन में एक चरित्र का पाठ कर तीन दिनों में एक आवृत्ति पाठ करें। इस पद्धति से प्रत्येक दिन अध्यायों की संख्या इस प्रकार होगी—

प्रथम दिन–	प्रथम अध्याय
द्वितीय दिन –	द्वितीय से चतुर्थ अध्याय
तृतीय दिन–	पञ्चम से त्रयोदश अध्याय

प्रत्येक दिन सप्तशती के अंगों का पाठ समान रूप से होगा। गुप्तवती टीकाकार ने केरल में इस पद्धति को प्रसिद्ध माना है।

इसी प्रकार सप्ताह पारायण का भी विधान किया गया है। इस पाठ में क्रमशः १, २, १, ४, २, १, २ अध्याय प्रतिदिन होंगे।

प्रथम दिन	प्रथम अध्याय
द्वितीय दिन	द्वितीय एवं तृतीय अध्याय
तृतीय दिन	चतुर्थ अध्याय
चतुर्थ दिन	पंचम से अष्टम अध्याय
पञ्चम दिन	नवम एवं दशम अध्याय
षष्ठ दिन	एकादश अध्याय
सप्तम दिन	द्वादश एवं त्रयोदश अध्याय

गुप्तवती टीकाकार ने इस सप्ताह पारायण को अधिक प्रसिद्ध माना है, किन्तु नवरात्र के क्रम में तीन दिन में एक आवृत्ति का कल्प उपयुक्त है, क्योंकि इससे एक नवरात्र में तीन आवृत्ति हो जाती है।

कात्यायनी-तन्त्र में इस सप्तशती के अनेक काम्य प्रयोगों का उल्लेख किया गया है।

होमे स्वाहान्तिमा एते पूजायां तु नमोऽन्तिमाः।
तर्पणे तर्पयाम्यन्ता ऊहनीया बुधैर्मताः।।

हवन– प्रत्येक मन्त्र के अन्त में '**स्वाहा**' पद जोड़कर हवन किया जाता है।

पूजन– प्रत्येक मन्त्र के अन्त में '**नमः**' पद जोड़कर पूजन किया जाता है।

तर्पण–प्रत्येक मन्त्र के अन्त में '**तर्पयामि**' पद जोड़कर पितरों को जल दिया जाता है।

इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार की कामना से दुर्गासप्तशती के पुरश्चरण का विधान कात्यायनी तन्त्र में इस प्रकार किया गया है।

वृद्धिपाठ

यह नवरात्र में विशेष प्रकार का अनुष्ठान है। परम्परानुसार जिस वर्ष नवरात्र में पूरे नौ दिनों तक पूजा होती है, उस वर्ष यह अनुष्ठान किया जाता है। इसमें तिथि के अनुसार सप्तशती की आवृत्ति होती है, अर्थात् प्रतिपदा को एक आवृत्ति पाठ होता है तो नवमी के दिन नौ आवृत्ति। एक से अधिक आवृत्ति के पाठ में अर्गला, कीलक, कवच आदि का एक बार पाठ करने की परम्परा है।

सम्पुट पाठ

प्रत्येक मन्त्र के पहले और बाद में विशेष सिद्ध मन्त्र जोड़कर सम्पुट पाठ किया जाता है। इस प्रकार प्रत्येक मन्त्र के बीच में दो बार विशेष मन्त्र का जप होता है। कात्यायनी तन्त्र में अनेक सिद्ध मन्त्रों का उल्लेख किया गया है, जिन मन्त्रों से सम्पुट पाठ करने पर अभीष्ट सिद्धि प्राप्त होती है।

१. अपमृत्यु का निवारण

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्।।

२. कामना-सिद्धि

जातवेदसे सुनवामसोममरातीयतो निदहाति वेदः।
स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः।।

३. कार्यसिद्धि

शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते।

४. कामना सिद्धि

करोतु सा नः शुभ हेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः।

५. अभीष्ट वर की प्राप्ति

एवं देव्याः वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः।
सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता मनुः।।

६. आपदाओं का निवारण

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि।
दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता।।

७. महामारी शान्ति

इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति।
तदा तदावतीर्याहं करिष्याम्यरिसंक्षयम्।।

८. स्वास्थ्य एवं विद्याप्राप्ति

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा
रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान्।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां
त्वामाश्रिताह्याश्रयतां प्रयान्ति।।

९. विद्याप्राप्ति एवं वाणी सम्बन्धी विकार का नाश

इत्युक्त्वा सा भगवती चण्डिका चण्डविक्रमा।।

इन मन्त्रों से सम्पुट पाठ या केवल इन मन्त्रों का एक लाख, दस हजार, हजार या सौ बार जप भी फलदायक कहा गया है।

सप्तशती के टीकाकार नागेश भट्ट और गुप्तवती टीकाकार भास्कर राय दीक्षित ने कुछ बीज-मन्त्रों से सम्पुट पाठ करने का भी उल्लेख किया है। ये प्रयोग एवं अनुष्ठान ऐसे लोगों के लिए हैं, जिन्होंने शक्ति-पूजन की परम्परा में विधिवत् दीक्षा ली है। जो दीक्षित नहीं हैं, वे दुर्गासप्तशती को एक स्तोत्र-ग्रन्थ मानकर निर्विकार भाव से माँ की आराधना मात्र करने के अधिकारी हैं।

दुर्गासप्तशती में चार स्थलों पर स्तुतियाँ हैं। इन स्तुतियों का पाठ अत्यन्त फलदायक है।

१. प्रथम अध्याय मन्त्र सं० ७२ से ८७ तक
२. चतुर्थ अध्याय सम्पूर्ण
३. पञ्चम अध्याय मन्त्र सं० ८ से ८२ तक
४. एकादश अध्याय सम्पूर्ण

इन स्तुतियों का पाठ श्रद्धा-पूर्वक करें।

सप्तशती से सम्बद्ध अनेक प्रकार के प्रयोग एवं आराधना-विधि विभिन्न ग्रन्थों में उपलब्ध हैं, किन्तु ये प्रयोग पुस्तक से सीखकर करने के स्थान पर समर्थ गुरु के आदेश से उनके निर्देशन में करना ही श्रेयस्कर है।

शारदीय नवरात्र — भवनाथ झा
२००६ ई०

प्राचीन वैदिक पूजा पद्धति

पूजा के पूर्व दिन एकभुक्त[१] कर पूजा के दिन प्रातःकाल नित्य-क्रिया सम्पन्न कर पवित्र होकर आसन पर बैठें।

जल लेकर-

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।।
ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु।
ॐ तत्सत्।

यजमान पवित्र होकर आसन पर बैठकर दीप प्रज्वलित करें।

मन्त्र—

भो दीप देवरूपस्त्वं कर्मसाक्षी ह्यविघ्नकृत्।
यावत् कर्मसमाप्तिः स्यात् तावत् त्वं सुस्थिरो भव।।

दीपक के ऊपर हाथ रख कर

ॐ पुनन्तु मां देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः।
पुनन्तु सर्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा।।

इस हाथ से अपने शरीर का स्पर्श करें।

आसन-शोधन-

ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।
त्वं च धारय मां नित्यं पवित्रं कुरु चासनम्।।

पवित्री-धारण मन्त्र-

ॐ पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः। तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम्।।

पञ्चदेवता, विष्णु, गौरी एवं गणेश की पूजा क्षेत्राचारानुसार करें।

सङ्कल्प

ॐ तत्सत्। ॐ अद्य आर्यावर्तदेशे ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीयपरार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे तत्प्रथमचरणे बौद्धावतारे अमुकर्तौ अमुके मासि अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकगोत्रस्य अमुकनामकस्य मम (अस्य अस्याः वा) सकलदुरितोपसर्गापच्छान्ति-दीर्घायुष्ट्व-बल-पुष्टि-नैरुज्यप्राप्तिपूर्वक-श्रीदुर्गाप्रीतिकामः

श्रीदुर्गापूजनं न्यासध्यानाद्यन्तनवार्णमन्त्रजपसहित-श्रीदुर्गासप्तशतीपाठं च अहं करिष्ये।

स्वस्तिवाचन-

ॐ आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो ऽअपरीतास ऽउद्‌भिदः।
देवा नो यथा सदमिद्वृधे ऽअसन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे।।१।।
ॐ देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानां रातिरभि नो निवर्त्तताम्।
देवानां सख्यमुपसेदिमा वयं देवा न ऽआयुः प्रतिरन्तु जीवसे।।२।।
ॐ तान् पूर्वया निविदा हूमहे वयं भगं मित्रमदितिं दक्षमस्रिधम्।
अर्यमणं वरुणं सोममश्विना सरस्वती नः सुभगा मयस्करत्।।३।।
ॐ तन्नो वातो मयोभु वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः।
तद्ग्रावाणं सोमसुतो मयोभुवस्तदश्विना शृणुतं धिष्ण्या युवम्।।४।।
ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियं जिन्वमवसे हूमहे वयम्।
पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये।।५।।
ॐ स्वस्ति न ऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो ऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु।।६।।
ॐ पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभं यावानो विदथेषु जग्मयः।
अग्निर्जिह्वा मनवः सूरचक्षसो विश्वे नो देवा ऽअवसागमन्निह।।७।।
ॐ भद्रंकर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टवां सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः।।८।।
ॐ शतमिन्नु शरदो ऽअन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम्।
पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः।।९।।
ॐ अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः।
विश्वेदेवा ऽअदितिः पञ्चजना ऽअदितिर्जातमदितिर्जनित्त्वम्।।१०।।

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिर्वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।।११।।

ॐ यतो यतः समीहसे ततो नो ऽ अभयंकुरु।
शन्नः कुरु प्रजाभ्योऽभयं नः पशुभ्यः।।१२।।

भूमि पर गाय के गोबर से लीपकर अथवा पीढ़ा पर लाल वस्त्र बिछाकर सबसे पहले कलश-स्थापन करें।

कलशस्थापन

गोमयलेपन

ॐ मानस्तोके तनये मा न आयुषि मा नो गोषु मा नो ऽअश्वेषु रीरिषः। मा नो वीरान् रुद्रभामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्वा हवामहे।।

जलसेचन

ॐ वेद्या वेदिः समाप्यते बर्हिषा बर्हिरिन्द्रियम्। यूपेन यूप आप्यायते प्रणीतो ऽअग्निरग्निना।।

वेदी निर्माण

चावल के पीठा से षट्दल कमल बनाकर उसके मध्य भाग का स्पर्श करें।

ॐ भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री पृथिवीं यच्छ पृथ्वीं दृꣳह पृथिवीं मा हिꣳसीः।।

इस पर पवित्र स्थान की मिट्टी एवं बालू से उत्तर की ओर ढाल रखते हुए वेदी बनायें।

यव निक्षेप (जौ डालें।)

ॐ धान्यमसि धिनुहि देवान् प्राणाय त्वोदानाय त्वा व्यानाय त्वा दीर्घामनुप्रसितिमायुषेधान्। देवो वः सविता हिरण्यपाणिः प्रतिगृभ्णात्वच्छिद्रेण पाणिना चक्षुषे त्वा महीनां पयोऽसि।।

कलशस्थापन

ॐ आजिघ्र कलशं मह्या त्वा विशन्तिदवः पुनरूर्जा निवर्त्तस्व सा नः।
सहस्रं धुक्ष्वोरुधारा पयस्वती पुनर्मा विशताद्रयिः।।

दध्यक्षतलेपन

ॐ दधिक्राब्णोऽअकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः।
सुरभिनो मुखाकरत् प्रण आयूंषि तारिषत्।।

जलदान

ॐ वरुणास्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भसर्जनीस्थो वरुणस्य ऋतसन्यसि वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसदनमासीद।।

पंचरत्न

ॐ सरत्नानि दाशुषे आरातिसहिता भगो भाग्यन्य तत्र धीमहे।

सप्तमृत्तिका

ॐ स्योना पृथिवी नो भवानृक्षरा निवेशनी यच्छानः शर्म सप्रथाः।

ॐ उद्धृतासि वराहेणकृष्णेन शतबाहुना।

नमस्ते सर्वदेवानां प्रभुवारुणि सुव्रते।।

सर्वौषधीः

ॐ या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा।

मनैनुबभ्रूणामहं शतं धामानि सप्त च।।

चन्दन

ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टांकरीषिणीम्।

ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्।।

दूर्वा

ॐ काण्डात्काण्डात् प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि।

एवा नो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च।।

गंगाजल

ॐ गङ्गाद्याः सरितः सर्वाः समुद्राश्च सरांसि च।

आयान्तु यजमानस्य दुरितक्षयकारकाः।।

ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऽऊर्जे दधातन।

महेरणाय चक्षसे।।

ॐ यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयते ह नः।

उशतीरिव मातरः।।

ॐ तस्मा ऽअरङ्गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ।

आपो जनयथा च नः।।

ताम्बूल (पान का पत्ता)

ॐ प्रणाय स्वाहा। ॐ अपानाय स्वाहा। ॐ व्यानाय स्वाहा।

द्रव्य

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।

स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

पंचपल्लव

ॐ अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता।

गोभाज इत्किलासथ यत्सनवथ पूरुषम्।।

ॐ ये वृक्षेषु शष्पिञ्जरा नीलग्रीवा विलोहिताः। तेषां सहस्रयोजनेव धन्वानि

तन्मसि।।

नारिकेल

ॐ याः फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः।

बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्वं हसः।।

वस्त्र

ॐ युवा सुवासाः परिवीत आगात् स उश्रेयान् भवति जायमानः।

तं धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्तः।।

दीप

ॐ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा अग्निर्वर्च्चो ज्योतिर्वर्च्चः स्वाहा। सूर्यो वर्च्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा।।

प्राणप्रतिष्ठा

ॐ मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्वरिष्टं यज्ञं समिमं दधातु।

विश्वेदेवास इह मादयन्तामों प्रतिष्ठ।।

पूजन

ॐ शान्तिकलशाधिष्ठितगणेशादिदेवताभ्यो नमः।

कलश स्थापन के बाद दुर्गा की प्रतिमा अथवा चित्र को अपने सामने मण्डप पताका आदि से सजाकर स्थापित कर भगवती की पूजा आरम्भ करें।

आवाहन

जातवेदसे सुनवामसोममरातीयतो निदहाति वेदः।

स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः।।

(ऋ० १।६६।१)

ॐ आर्या रौद्रीमावाहयामि।

चन्दन, फूल, एवं अक्षत लेकर **भगवति दुर्गे इहागच्छ इह तिष्ठ। मम पूजां गृहाण।**

इस तरह आवाहन कर,

आसन

तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं वैरोचनींकर्मफलेषु जुष्टाम्।

दुर्गां देवीं शरणं प्रपद्यामहे-ऽसुरान्नाशयित्र्यै ते नमः।।(देव्यथर्वशीर्ष :६)

इदमासनं श्रीदुर्गादेव्यै नमः। आसनं समर्पयामि।

इस मन्त्र से मुट्ठी भर जयन्ती अथवा दूर्वा आसन के लिए दें।

यज्ञोपवीत

अग्ने त्वं पारयानव्यो अस्मान्त्स्वस्तिभिरति- दुर्गाणि विश्वा।
पूश्च पृथ्वी बहुला न उर्वी भवा तोकाय तनयाय शं योः।।

(ऋ० १।१८९।२)

इस मन्त्र से यज्ञोपवीत समर्पित कर निम्न मन्त्रों से स्नान करायें।

स्नान

ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऽऊर्जे दधातन।
महेरणाय चक्षसे।।
यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयते ह नः।
उशतीरिव मातरः।।
तस्मा ऽअरङ्गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ।
आपो जनयथा च नः।। (अथर्व०१।६।५)

हिरण्यवर्णाः शुचयः पावका यासु जातः सविता यास्वग्निः।
या अग्निं गर्भं दधिरे सुवर्णास्ता न आपः शं स्योना भवन्तु।।१।।
यासां राजा वरुणो याति मध्ये सत्यानृते अवपश्यन् जनानाम्।
या अग्निं गर्भं दधिरे सुवर्णास्ता न आपः शं स्योना भवन्तु।।२।।
यासां देवा दिवि कृण्वन्ति भक्षं या अन्तरिक्षे बहुधा भवन्ति।
या अग्निं गर्भं दधिरे सुवर्णास्ता न आपः शं स्योना भवन्तु।।३।।
शिवेन मा चक्षुषा पश्यतापः शिवया तन्वोपस्पृशत त्वचं मे।
घृतश्चुतः शुचयो याः पावकास्ता न आपः शं स्योना भवन्तु।।४।।

ॐ पुनन्तु मा पितरः सोम्यासः पुनन्तु मा पितामहाः पुनन्तु प्रपितामहाः पवित्रेण शतायुषा। पुनन्तु मा पितामहाः पुनन्तु प्रपितामहाः पवित्रेण शतायुषा विश्वमायुर्व्यश्नवै।।१।।

अग्नऽआयूँषि पवसऽआसुवोर्जमिषं च नः।
आरे बाधस्व दुच्छुनाम्।।२।।
पुनन्तु मां देवजनाः पुनन्तु मनसा धियः।
पुनन्तु सर्वा भूतानि जातवेदः पुनीहि मा।।३।।
पवित्रेण पुनीहि मा शुक्रेणदेव दीद्यत्।

अग्ने क्रत्वा क्रतूँरनु।।४।।
यत्ते पवित्रमर्चिष्यग्ने विततमन्तरा।
ब्रह्म तेन पुनातु माम्।।५।।
पवमानः सोऽअद्य नः पवित्रेण विचर्षणिः।
यः पोता स पुनातु मा।।६।।
उभाभ्यां देव सवितः पवित्रेण सवेन च।
मां पुनीहि विश्वतः।।७।।
वैश्वदेवी पुनती देव्यागाद्यस्यामिमा बह्व्यस्तन्वो वीतपृष्ठाः।
तया मदन्तः सधमादेषु वयं स्याम पतयो रयीणाम्।।८।।

इसके बाद गन्ध, पुष्प, धूप एवं दीप से निम्नलिखित ग्यारह रूपों की पूजा इस प्रकार करें—

ॐ आर्यायै नमः अमुष्यै नमोऽमुष्यै नमः।
ॐ रौद्र्यै नमः अमुष्यै नमोऽमुष्यै नमः।
ॐ महाकाल्यै नमः अमुष्यै नमोऽमुष्यै नमः।
ॐ महायोगिन्यै नमः अमुष्यै नमोऽमुष्यै नमः।
ॐ सुवर्णपुष्प्यै नमः अमुष्यै नमोऽमुष्यै नमः।
ॐ देवसङ्कीर्त्यै नमः अमुष्यै नमोऽमुष्यै नमः।
ॐ महायज्ञ्यै नमः अमुष्यै नमोऽमुष्यै नमः।
ॐ महावैष्णव्यै नमः अमुष्यै नमोऽमुष्यै नमः।
ॐ महापृथिव्यै नमः अमुष्यै नमोऽमुष्यै नमः।
ॐ मनोगम्यै नमः अमुष्यै नमोऽमुष्यै नमः।
ॐ शङ्खधारिण्यै नमः अमुष्यै नमोऽमुष्यै नमः।

इस प्रकार अर्चना कर सावित्री मन्त्र (**ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॐ।**) जपकर निम्नलिखित मन्त्र से दुर्गा देवी को हविष् निवेदित करें—

भगवती दुर्गा के लिए शास्त्रों में पायस (खीर) को 'परमान्न' कहा गया है। उसी खीर से हवन करें। अभाव में गाय के घी का प्रयोग का विधान मीमांसा-शास्त्र में किया गया है।

ॐ भगवत्यै दुर्गादेव्यै हविर्निवेदयामि।

दश बार पञ्चदुर्गा का जप करें।

(यहाँ ऐसा प्रतीत होता है कि बौधायन स्वयं पञ्चदुर्गा के उपासक थे। किन्तु बीज मन्त्र गोपनीय होते हैं इसलिए उन्होंने मन्त्र का उल्लेख नहीं किया है। इस स्थल पर साधक अपने

अपने इष्टदेव के मन्त्र का जप दश बार करें।)

इसके बाद स्वस्तिवाचन करे।

पुनः निम्नलिखित मन्त्रों का पाठ करें—

जातो यदग्ने भुवनाव्यख्यः पशून्न गोपा इर्यः परिज्मा।
वैश्वानर ब्रह्मणे विन्द गातुं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।।

(ऋ०७।१४।१६)

वषट् ते विष्णवास आकृणोमि तन्मे जुषस्व शिपिविष्ट हव्यम्।
वर्धन्तु त्वा सुष्टुतयो गिरो मे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।।

(ऋ० ७।६६।७)

वास्तोष्पते शग्मया संसदा ते सक्षीमहि रण्वया गातुमत्या।
पाहि क्षेम उत योगे वरं नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।।

(ऋ० ७।५४।३)

एवावन्दस्व वरुणं बृहन्तं नमस्याधीरममृतस्य गोपाम्।
स नः शर्म त्रिवरूथं वि यंसत् पातं नो द्यावापृथिवी उपस्थे।।

(ऋ०८।४२।२)

आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरं सहस्रिणीभिरुपयाहि यज्ञम्।
वायो अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।।

(ऋ० ७।६३।५)

हिरण्यवर्णाः शुचयः पावका यासु जातः सविता यास्वग्निः।
या अग्निं गर्भं दधिरे सुवर्णास्ता न आपः शं स्योना भवन्तु।।१।।

(अथर्व० १।६।५।१)

अभयं द्यावापृथिवी इहास्तु नोभयं सोमः सविता नः कृणोतु।
अभयं नोस्तूर्वन्तरिक्षं सप्तऋषीणां च हविषाभयं नो अस्तु।।१।।

(अथर्व० ६।४।५।१)

अश्वावतीर्गोतमीर्न उषासो वीरवतीः सदमुच्छन्तु भद्राः।
घृतं दुहाना विश्वतः प्रपीता यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।।

(ऋ० ७।४१।७)

त्वं वरुण उत मित्रो अग्ने त्वां वर्धन्ति मतिभिर्वसिष्ठाः।
त्वे वसु सुषणनानि सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।।

(ऋ० ७।१४।३)

बृहस्पते युवमिन्द्रश्च वस्वो दिव्यस्येशाथे उत पार्थिवस्य।
धत्तं रयिं स्तुवते कीरये चिद् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।।

(ऋ०७।६७।१०)

स्वस्ति न ऽइन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो ऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु।।

(ऋ०१।८९।६)

इसके बाद सावित्री मन्त्र जप करते हुए **भगवत्यै दुर्गा देव्यै हविरुपासयामि** इस मन्त्र से भगवती को नैवेद्य समर्पित कर शेष भाग ब्राह्मणों को दान में देकर वर्ष पर्यन्त भगवती की उपासना करें। इससे सभी कामनाओं की सिद्धि होती है— ऐसा बौधायन कहते हैं।

अग्निस्थापन-विधि

हवन करनेवाला पूर्वाभिमुख होकर अपने आसन पर बैठकर शुद्धि आदि कर संकल्प करें—

ॐ **तत्सत्। ॐ अद्य आर्यावर्तदेशे ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीयपरार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे तत्प्रथमचरणे बौद्धावतारे अमुकर्तौ अमुके मासि अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकगोत्रः शर्मा वर्मा गुप्तः दासः अमुकनामा श्रीदुगादेवताप्रीतिद्वारास्मृति-पुराणोक्त फलप्राप्त्यर्थं श्रीदुगदिवताप्रीतये अमुकमन्त्रद्वारा अमुकसंख्यात्मकं साकल्येन आज्येन पायसेन वा हवनमहं करिष्ये।**

इसके बाद एक हाथ चौकोर भूमि अथवा स्थण्डिल (चार अंगुल ऊँची चौकोर वेदी) को पहले पश्चिम से पूर्व फिर दक्षिण से उत्तर क्रम में तीन बार कुशों से बुहार कर उन कुशों को ईशान कोण में फेंक दें। गाय के गोबर से उस भूमि को लीपकर स्रुव की जड़ से पश्चिम से पूर्व की ओर प्रादेश मात्र (छह इंच, दश अंगुल) तीन रेखा उत्तरोत्तर क्रम से करें। अनामिका और अंगुष्ठा से उन रेखाओं से कुछ मिट्टी निकालकर ईशान कोण में फेंकदें। भूमि को जल से पवित्र करें। इसके बीच में रोली या चावल के पीठा से वह्निमण्डल (^) बनाकर उसमें अग्नि तथा दुर्गादेवी की पूजा करें। कांसा अथवा ताम्बा की थाली में अग्नि लेकर —

ॐ अग्निं दूतं पुरोदधे हव्यवाहमुब्रुवे। देवान् आसादयादिह।

इस मन्त्र से अग्नि को पश्चिमाभिमुख उड़ेल लें।

इसके बाद ब्रह्मवरण करें। चन्दन, फूल, अक्षत, पान आदि वरण-सामग्री लेकर — ॐ **अद्य अमुकदेवतायाः करिष्यमाणहवनकर्मणि कृताकृतावेक्षणरूपब्रह्मकर्मकर्तुं एभिः वरणीयद्रव्यैः अमुकगोत्रम् अमुकशर्माणं त्वामहं वृणे।**

ब्रह्मा की उक्ति— ॐ **वृतोऽस्मि।**

यजमान की उक्ति— ॐ **यथाविहितं कर्म कुरु।**

ब्रह्मा की उक्ति— ॐ **करवाणि।**

अग्नि के दक्षिण भाग में पूर्वाग्र कुश का आसन देकर ब्रह्मा को हाथ से पकड़कर अग्नि की परिक्रमा कराते हुए **अस्मिन् कर्मणि त्वं मे ब्रह्मा भव** यह मन्त्र पढ़ते हुए स्थापित करें।

साक्षात् ब्रह्मा के अनुकल्प में पचास कुशों का ऊर्ध्वकेश ब्रह्मा बनाकर पुष्पाक्षत लेकर **ॐ अद्य अमुकदेवतायाः करिष्यमाणहवनकर्मणि कृताकृतावेक्षणरूपब्रह्मकर्मकर्तुं त्वं मे ब्रह्मा भव** यह मन्त्र पढ़ते हुए पूर्वाग्र कुश का आसन देकर कुश रूप ब्रह्मा को अग्नि की परिक्रमा कराते हुए स्थापित करें।

प्रणीता-पात्र (मिट्टी का एक ढकना) को जल से भर कर इसे कुशों से ढँककर ब्रह्मा का मुख देखते हुए अग्नि से उत्तर एक कुश पर रखें। वहीं दूसरे कुश पर प्रोक्षणी-पात्र (मिट्टी का एक ढकना, जिसके बीच में मिट्टी से ही एक मेड़ बनी हो।) स्थापित करें। प्रणीता पात्र से अंजलि में जल लेकर प्रोक्षणीपात्र में डालें। पवित्र (कुश के मध्य-पत्र से बना हुआ) प्रणीता पात्र में दें तथा उसे व्यस्त हाथ से लेकर उस जल से अपने को तथा अन्य यज्ञीय सामग्री को पवित्र करें। पवित्र को प्रोक्षणी में रखें।

अब अग्नि का परिस्तरण करें। बर्हिष् (६४ कुशों का समूह) से कुश लेकर (१) अग्नि कोण से ईशान कोण तक (२) ब्रह्मा से लेकर अग्नि तक (३) नैर्ऋत्य कोण से वायव्य कोण पर्यन्त (४) अग्नि से प्रणीता तक कुश के अग्रभाग से उसकी जड़ को ढँकते हुए कुश बिछावें।

अब स्रुव-सम्मार्जन करें। एक कुश लेकर उसकी जड़ से स्रुव के निचले भाग को तथा अग्रभाग से स्रुव के अग्रभाग का सम्मार्जन कर अग्नि पर तीन बार चढ़ावें और उतारें। पुनः दूसरे कुश से पूर्व रीति से उसका सम्मार्जन कर प्रणीता के जल से सिक्त कर अपने वाम भाग में उसे कुश पर रखें।

अब घृत का संशोधन करें। काँसा के पात्र में घी लेकर अग्नि पर तीन बार चढावें और उतारें। एक कुश के अग्र भाग को जला कर घी के ऊपर फिरा कर उसे ईशान कोण में फेंकें तथा पवित्री के द्वारा प्रणीता के जल से उसे शुद्ध करें।

उपयमन कुश (वेणी, तीन कुशों से गूँथा हुआ) वाम हाथ में लेकर मध्यमा और अनामिका के भीतर तथा तर्जनी और कनिष्ठा से बाहर फँसाते हुए धारण करें। उठते हुए मन ही मन प्रजापति का ध्यान करते हुए प्रादेश मात्र तीन समिधाएँ दोनों ओर घृत लगाकर अग्नि में डालें। स्रुव से घृत लेकर आधार हवन करें–

ॐ प्रजापतये स्वाहा । इदं प्रजापतये।

ॐ इन्द्राय स्वाहा । इदमिन्द्राय।

आज्यभाग हवन –

अग्नये स्वाहा। इदमग्नये।

ॐ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय।

व्याहृति हवन –

ॐ भूः स्वाहा। इदं भूः।

ॐ भुवः स्वाहा। इदं भुवः।

ॐ स्वः स्वाहा। इदं स्वः।

इसके बाद हव्य-वस्तुओं से यथा संकल्पित हवन करें।

हवन पूरा होने के बाद घृत से प्राजापत्य होम करें।

ॐ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये।

ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा। ॐ अग्नये स्विष्टकृते।

इस के बाद ब्रह्मा का विसर्जन करें। पूर्णपात्र (२५६ मुठी चावल से भरा एक घड़ा), ब्रह्मसन्तोष के रूप में द्रव्य, पुष्प एवं अक्षत लेकर – **ॐ अद्य कृतैतत् अमुकदेवता हवनकर्मणि ब्रह्मकर्मप्रतिष्ठार्थम् इदं सावरणं पूर्णपात्रं प्रजापतिदैवतं अमुकगोत्राय अमुकशर्मणे ब्रह्मणे दक्षिणां तुभ्यमहं सम्प्रददे।**

कुश के ब्रह्मा होने पर – **इदं पूर्णपात्रं ब्रह्मणे दक्षिणां तुभ्यं नमः** कहकर कुश का बन्धन खोल दें। प्रणीता से पवित्र के साथ जल लेकर अपने मस्तक पर जल छिड़कें – **ॐ सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु**। इसके बाद **ॐ दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः** पढ़ते हुए प्रणीता को उलट दें। जिस क्रम में परिस्तरण किया गया था, उसी क्रम से बर्हिष् को समेटते हुए सबको मोड़ कर घी में डुबाकर **ॐ देवायातु विदो गातुं वित्त्वा गातु मित। मनस्पत इमं देव यज्ञꣳस्वाहा। वातेधाः स्वाहा।** इस मन्त्र से अग्नि में डालें।

पूर्णाहुति– वस्त्र ताम्बूल, फल, पुष्प एवं घृत स्रुव पर लेकर खड़ा होकर –

ॐ मूर्द्धानं दिवोऽअरतिं पृथिव्या वैश्वानर मृत आजातमग्निम्। कविꣳसम्राजमतिथिं जनानामासन्ना पात्रं जनयन्त देवाः स्वाहा।

इसके बाद अग्नि और पूजित देवता का विसर्जन कर त्र्यायुष करें। स्रुव से भस्म लेकर उसके पृष्ठभाग से अनामिका द्वारा भस्म लेकर

ॐ **त्र्यायुषं जमदग्ने** ललाट में लगावें।

ॐ **कश्यपस्य त्र्यायुषम्** कण्ठ में लगावें।

ॐ **यद्देवेषु त्र्यायुषम्** दाहिनी बाँह के ऊपर लगावें।

ॐ **तन्नो अस्तु त्र्यायुषम्** हृदय में लगावें।

इस प्रकार अग्नि-स्थापन कर शेष हविष् को उपर्युक्त ग्यारह नामों से अग्नि में समर्पित करें।

दुर्गासप्तशती पाठविधि

नवार्णविधिः

विनियोग

श्रीर्गणपतिर्जयति। अस्य श्रीनवार्णमन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांसि श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः ऐं बीजम् ह्रीं शक्तिः क्लीं कीलकम् श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास

ब्रह्मविष्णुरुद्रेभ्यः ऋषिभ्यो नमः। तर्जनी मध्यमा और अनामिका इन तीन अंगुलियों से शिर का स्पर्श करें।

गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दोभ्यो नमः। तर्जनी मध्यमा और अनामिका इन तीन अंगुलियों से मुख का स्पर्श करें।

महाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीदेवताभ्यो नमः। तर्जनी मध्यमा और अनामिका इन तीन अंगुलियों से हृदय का स्पर्श करें।

ऐं बीजाय नमः। तर्जनी मध्यमा और अनामिका इन तीन अंगुलियों से गुदा का स्पर्श करें।

ह्रीं शक्तये नमः। तर्जनी मध्यमा और अनामिका इन तीन अंगुलियों से दोनों पैरों का स्पर्श करें।

क्लीं कीलकाय नमः। तर्जनी मध्यमा और अनामिका इन तीन अंगुलियों से नाभि का स्पर्श करें।

करन्यास

ॐ ऐं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। दोनों हाथों की तर्जनी से दोनों अंगूठों का स्पर्श करें।

ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। दोनों हाथों के अंगूठे से दोनों तर्जनी का स्पर्श करें।

ॐ क्लीं मध्यमायां नमः। अंगूठों से मध्यमा अंगुलियों का स्पर्श करें।

ॐ चामुण्डायै अनामिकायां नमः। दोनों अनामिका अंगुलियों का स्पर्श करें।

ॐ विच्चे कनिष्ठिकायां नमः। कनिष्ठिका अंगुलियों का स्पर्श करें।

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे करतलपृष्ठाभ्यां नमः। दोनों हथेलियों और उनके पृष्ठों का स्पर्श करें।

हृदयादिन्यास

ॐ ऐं हृदयाय नमः। दाहिने हाथ की पाँचो अंगुलियों से हृदय का स्पर्श करें।

ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा। दाहिने हाथ की पाँचो अंगुलियों से सिर का स्पर्श करें।

ॐ क्लीं शिखायै वषट्। दाहिने हाथ की पाँचो अंगुलियों से शिखा का स्पर्श करें।

ॐ चामुण्डायै कवचाय हुम्। दाहिने हाथ की पाँचो अंगुलियों से बायें कन्धे का तथा बायें हाथ की पाँचो अंगुलियों से दाहिने कन्धे का स्पर्श करें।

ॐ विच्चे नेत्रत्रयाय वौषट्। दाहिने हाथ की तर्जनी से दायीं आँख का, कनिष्ठा से वायीं आँख का तथा मध्यमा से भौंह के बीच का स्पर्श करें।

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय फट्। दाहिने हाथ की अनामिका मध्यमा एवं तर्जनी को फैलाते हुए दाहिनी ओर से हाथ पीछे की ओर से घुमाते हुए बायें हाथ पर थपकी बजायें।

अक्षरन्यास

ॐ ऐं नमः। तर्जनी मध्यमा और अनामिका इन तीन अंगुलियों से शिखा का स्पर्श करें।

ॐ ह्रीं नमः। दायीं आँख का स्पर्श करें।

ॐ क्लीं नमः। बायीं आँख का स्पर्श करें।

ॐ चां नमः। दाहिने कान का स्पर्श करें।

ॐ मुं नमः। बायें कान का स्पर्श करें।

ॐ **डां नमः।** दाहिने नाक का स्पर्श करें।

ॐ **यै नमः।** बायें नाक का स्पर्श करें।

ॐ **विं नमः।** मुख का स्पर्श करें।

ॐ **च्चे नमः।** गुदा का स्पर्श करें।

दिङ्न्यास

ॐ **ऐं प्राच्यै नमः।** पूर्व दिशा का ध्यान करें।

ॐ **ऐं आग्नेय्यै नमः।** पूर्व-दक्षिण कोण का ध्यान करें।

ॐ **ह्रीं दक्षिणस्यै नमः।** दक्षिण दिशा का ध्यान करें।

ॐ **ह्रीं नैर्ऋत्यै नमः।** दक्षिण-पश्चिम कोण का ध्यान करें।

ॐ **क्लीं प्रतीच्यै नमः।** पश्चिम दिशा का ध्यान करें।

ॐ **क्लीं वायव्यै नमः।** पश्चिम-उत्तर कोण का ध्यान करें।

ॐ **चामुण्डायै उदीच्यै नमः।** उत्तर दिशा का ध्यान करें।

ॐ **चामुण्डायै ऐशान्यै नमः।** उत्तर-पूर्व कोण का ध्यान करें।

ॐ **वच्चे ऊर्ध्वायै नमः।** आकाश का ध्यान करें।

ॐ **विच्चे भूम्यै नमः।** पृथ्वी का ध्यान करें।

ध्यानम्

खड्गञ्चक्रगदेषु-चाप-परिघाञ्छूलम्भुशुण्डीं शिरः
शंखं सन्दधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम्।
नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकां
यामस्तौत् स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम्।।१।।

अक्षस्रक्परशुङ्गदेषुकुलिशं पद्मं धनुः कुण्डिकां
दण्डं शक्तिमसिञ्च चर्म्म चलजं घण्टां सुराभाजनम्।
शूलं पाश-सुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननां
सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम्।।२।।

घण्टाशूलहलानि शंख-मुसले चक्रं धनुः सायकं
हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशु-तुल्यप्रभाम्।
गौरीदेह-समुद्भवां त्रिनयनामाधारभूतां महा-
पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम्।।३।।

यह नवार्ण मन्त्र इस प्रकार है– ॐ **ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे।** इसका जप १०८ बार करें ।

पुस्तक-पूजा

पुस्तक को शरयन्त्र (रेहल), काठ की चौकी, या किसी भी पवित्र आधार पर रखें। हाथ में लेकर पाठ करने का निषेध किया गया है। अक्षत, फूल, सिन्दूर, एवं चन्दन हाथ में लेकर सरस्वती के स्वरूप पुस्तक की पूजा करें ॐ **सर्वविद्यास्वरूपिण्यै पुस्तक्यै नमः।**

सरस्वती का ध्यान करें–

अक्षसूत्राङ्कुशधरा पाशपुस्तकधारिणी।
मुक्ताहारसमायुक्ता वाचि तिष्ठतु मे सदा।।
लक्ष्मीर्मेधा धरा पुष्टिः गौरी तुष्टिः प्रभा मतिः।
एताभिः पाहि तनुभिरष्टाभिर्मा सरस्वति।।

सप्तशतीन्यास

विनियोग

प्रथममध्यमोत्तरचरितत्रयस्य ब्रह्माविष्णुरुद्रा ऋषयः श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वित्यो देवताः गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांसि नन्दाशाकम्भरीभीमाः शक्तयः रक्तदन्तिकादुर्गाभ्रामर्यो बीजानि अग्निवायुसूर्यास्तत्त्वानि ऋग्यजुःसामवेदाः ध्यानानि सकलकामनासिद्धये श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वतीदेवताप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा।
शङ्खिनी चापिनी बाणभुशुण्डीपरिघायुधा।

ॐ **ऐं शिरसि** अनामिका, मध्यमा एवं कनिष्ठिका से सिर का स्पर्श करें।

सौम्या सौम्यतराशेषसौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरी।
परा पराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी॥
ॐ **ऐं मुखे** अनामिका, मध्यमा एवं कनिष्ठिका से मुख का स्पर्श करें।

यच्च किञ्चित् क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके।
तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा।
ॐ **ऐं हृदि** अनामिका, मध्यमा एवं कनिष्ठिका से हृदय का स्पर्श करें।

यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पातात्ति यो जगत्॥
सोऽपि निद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः।
ॐ **ऐं गुह्ये** अनामिका, मध्यमा एवं कनिष्ठिका से गुदा का स्पर्श करें।

विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान एव च॥
कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत्।
ॐ **ऐं पादयोः** अनामिका, मध्यमा एवं कनिष्ठिका से दोनों पैर का स्पर्श करें।

शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च॥
ॐ **ह्रीं** अनामिका, मध्यमा एवं कनिष्ठिका से हृदय का स्पर्श करें।

प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे।
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि॥
ॐ **ह्रीं** अनामिका, मध्यमा एवं कनिष्ठिका से गुदा का स्पर्श करें।

सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते।
यानि चात्यर्थघोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम्॥
ॐ **ह्रीं** अनामिका, मध्यमा एवं कनिष्ठिका से दाहिने पैर का स्पर्श करें।

खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके।
करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः॥
ॐ **ह्रीं** अनामिका, मध्यमा एवं कनिष्ठिका से बायें पैर का स्पर्श करें।

सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते॥
ॐ **क्लीं शिरसि** अनामिका, मध्यमा एवं कनिष्ठिका से सिर का स्पर्श करें।

एतत् ते वदनं सौम्यं लोचनत्रयभूषितम्।
पातु नः सर्वभीतिभ्यः कात्यायनि नमोऽस्तु ते॥
ॐ **क्लीं मुखे** अनामिका, मध्यमा एवं कनिष्ठिका से मुख का स्पर्श करें।

ज्वालाकरालमत्युग्रमशेषासुरसूदनम्।
त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालि नमोऽस्तु ते॥
ॐ **क्लीं दक्षिणभुजे** अनामिका, मध्यमा एवं कनिष्ठिका से दाहिनी भुजा का स्पर्श करें।

हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत्।
सा घण्टा पातु नो देवि पापेभ्योऽनः सुतानिव॥
ॐ **क्लीं वामभुजे** अनामिका, मध्यमा एवं कनिष्ठिका से बायीं भुजा का स्पर्श करें।

असुरासृग्वसापङ्कचर्चितस्ते करोज्ज्वलः।
शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके त्वां नता वयम्॥
ॐ **क्लीं हृदये** अनामिका, मध्यमा एवं कनिष्ठिका से हृदय का स्पर्श करें।